जीवन रूपु सिमरणु प्रभ तेरा ।।
भाग – २

चौरासी लाख योनियाँ अपने-अपने भीतर **लिखे** 'हुकुम' की सहज चाल में अनजाने ही विचरण कर रही हैं तथा अपने **'कर्ता' के हुकुम में** अपना 'जीवन' सफल कर रही हैं।

परन्तु, त्रि-गुण माया के भ्रम-भुलाव में भटके हुए इन्सान को —

'हुकुम'
शब्द
नाम
भाणा
प्रेरणा
मार्ग दर्शन
जीवन

को **दर्शाने, सिखलाने तथा कमाने** के लिए, अकाल पुरुष ने अपने संतों, भक्तों, गुरूओं, अवतारों तथा उनकी बाणी के माध्यम से, अनगिनत प्रकार से उपदेश देने तथा प्रचार करने के प्रयत्न किये हैं। फिर भी यह इन्सान अपने आत्मन 'कर्ता' तथा 'हुकुम' से अनजान, बेपरवाह तथा विमुख हो रहा है।

इस के कारणों की खोज तथा इस के इलाज अथवा सुधार के विषय में गहरी तथा दीर्घ विचार करने की आवश्यकता है।

किसी चिंतन को **'ख्याल'** कहा जाता है।
किसी ख्याल की ओर गौर किया जाये, तब वह **'ध्यान'** बन जाता है ।
रुचि या दिलचस्पी अनुसार ध्यान **तीव्र** (intense) **बन जाता है।**
'तीव्र ध्यान' से **भावनाएं** उत्पन्न होती हैं।
भावनाओं की सूक्ष्म ख्याली उड़ान को **'कविता'** कहा जाता है।
दिलचस्पी तथा रुचि अनुसार **कर्मों की प्रेरणा** होती है।
कर्मों के अभ्यास द्वारा **'आदतें'** बनती हैं।

आदतों के अभ्यास द्वारा **'रुचियां'** बनती हैं।
गहरी रुचियों द्वारा **'स्वभाव'** बनता है।
स्वभाव अनुसार हमारा **'चाल-चलन'** बनता है।
चाल चलन अनुसार हमारा **'व्यक्तित्व'** बनता है।
व्यक्तित्व अनुसार हमारे **'भाग्य'** बनते हैं।
व्यक्तित्व अनुसार हमारे चारों ओर **'वातावरण'** बनता है।
व्यक्तित्व अनुसार हमारी **'अपनी दुनिया'** बनती है।
व्यक्तित्व अनुसार हमारे जीवन का लोगों पर **'प्रभाव'** होता है।
व्यक्तित्व ही हमारी **'जीवन दिशा'** बन जाती है।
व्यक्तित्व ही अन्तःकरण में धँस-बस-समा जाता है।
इसी अन्तःकरण अनुसार ही हमारे **अगले जन्मों की 'दिशा' बनती है।**

इन **'मानसिक अवस्थाओं'** का मूल कारण या बीज हमारे विचार अथवा ख्याल ही हैं।

हमारे कर्म, आदतें, स्वभाव, जीवन, अन्तःकरण, भाग्य आदि सब कुछ अच्छे या बुरे ख्यालों पर निर्भर हैं।

जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ।। (पृ. १३४)

जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना ।। (पृ. ४३३)

यदि हमारे ख्याल अच्छे, उत्तम तथा दैवीय हों तब हमारा 'जीवन' उच्च, अच्छा, सुहाना तथा दैवीय बन सकता है।

बुरी तथा तुच्छ रुचियों वाले ख्यालों से असुरी अवगुण उत्पन्न होते हैं, तथा लोभ-लालच, वैर विरोध, चिंता-फिकर में अहम्-ग्रस्त **ग्लानि पूर्ण जीवन** भोगते हैं तथा दुखी होते हैं।

पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ।। (पृ. १३३)

अपने जीवन को बदलने के लिए सब से पहले, हमारी अन्तर आत्मा में **'अच्छे-बुरे' की पहचान, 'निर्णय शक्ति' अथवा 'विवेक बुद्धि' आवश्यक है।** परन्तु अफसोस की बात यह है कि हमारी बुद्धि इतनी मलिन हो गयी है कि हम 'अच्छाई' तथा 'बुराई' का 'निर्णय' करने में भी **असमर्थ हैं** तथा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मलिन कर्मों को भी **उचित** मानते हैं।

यह निर्णय शक्ति या विवेक बुद्धि प्राप्त करने के लिए —

उत्तम – पवित्र, जीवन्त **साध संगति,**

नाम-सिमरन अभ्यास कमाई,

गुर प्रसादि की आवश्यकता है ।

इस निर्णय शक्ति के **बिना**, हम अपनी पुरानी, गलत तथा मलिन सोच-प्रणाली में ही कर्म करते रहेंगे तथा परिणाम भोगते रहेंगें।

पहले बताया जा चुका है कि हमारे मन की रंगत या जीवन का मूल कारण हमारे ख्याल ही हैं । इसलिए ख्यालों के बदलने से ही, हमारा 'जीवन' बदला जा सकता है ।

हमारा **'मन'** आस पास के वातावरण तथा संगति का प्रभाव लेता है ।

जो जैसी संगति मिलै से तैसो फलु खाइ ।। (पृ. १३६९)

पुरानी तुच्छ रंगत वाले मन को बदलने के लिए, दैवीय गुणों की **रंगत** चढ़ाने की आवश्यकता है, जिससे हमारे कर्मों के परिणाम या 'फल', अच्छे हो सकते हैं तथा हमारा जीवन श्रेष्ठ, उत्तम, सुहाना, सुखदायी तथा कल्याणकारी हो सकता है।

यह **'दैवीय-रंगत'** केवल बख्शे हुए गुरमुख प्यारों महापुरुषो की संगति से ही चढ़ सकती है ।

साध-संगति तथा सिमरन करते हुए, ज्यों-ज्यों हमारा मन निर्मल होता जायेगा, हमारी **'निर्णय शक्ति'** का विकास होता जायेगा तथा हम तुच्छ ख्यालों तथा कर्मों से बचने का प्रयत्न करेंगे तथा उनकी अपेक्षा —

उत्तम

श्रेष्ठ

सुन्दर

निर्मल

दैवीय

आत्मिक

ख्यालों का अभ्यास होगा ।

चौरासी लाख योनियाँ तथा इनके **सरताज 'इन्सान'** के जीवन के **कुछ पक्षों का निर्णय** यूँ किया जा सकता है —

1. अन्य योनियाँ : अन्जाने ही हुकुम में जीवन व्यतीत करती हैं।
   इन्सान : जान-बूझ कर 'हुकुम' से विमुख हो कर **अपने ही 'भाणे'** में मनमर्जी से जीवन भोगता है।
2. अन्य योनियाँ : अपने कर्ता के हुकुम में सन्तुष्ट होकर **सब-संतोष** में खुश हैं।
   इन्सान : प्रकृति के अनगिनत उपहारों को प्रयोग करता हुआ भी असन्तुष्ट, नाशुक्र, कृतघ्न है तथा दुखी होता है।
3. अन्य योनियाँ : वैर -विरोध किसी हद तक सीमित है।
   इन्सान : वैर-विरोध, ईर्ष्या-द्वेष तथा जलन इतनी बढ़ा ली है कि खींचतान, नफरत, आपा-धापी, लड़ाईयाँ-झगड़ों से संसार में भगदड़ मचा रखी है।
4. अन्य योनियाँ : अपनी दैनिक आवश्यकताओं के इलावा अन्य कोई लोभ लालच नहीं करती।
   इन्सान : सब कुछ होते हुए भी, लोभ-लालच में **'व्याकुल हुए'** फिरते हैं।
5. अन्य योनियाँ : सीमित बुद्धि द्वारा अपने कर्त्ता के भाणे में विचरण करके, अपना जीवन सफल कर रही हैं।
   इन्सान : असीम बुद्धि होते हुए भी, अहम् के भ्रम-भुलाव में अज्ञानतावश 'जीवन' व्यर्थ खो रहा है तथा रसातल की ओर बहता जा रहा है।
6. अन्य योनियाँ : भाणे में रहते हुए कोई बुरा कर्म या पाप नहीं कर सकती।
   इन्सान : तीक्ष्ण बुद्धि तथा सूझ-बूझ के होते हुए भी — कूड़, फरेब, बेईमानी, लूट-मार, पाखण्ड, अत्याचार द्वारा पशुओं से भी तुच्छ तथा ग्लानिपूर्ण जीवन भोगता तथा यम के वश पड़ता है।
7. अन्य योनियाँ : अपने-अपने साथ लिखे गुप्त 'धर्म' को सहज स्वभाव, चुपचाप ही ईमानदारी से कमा रही है।

इन्सान : अनेक प्रकार के धर्म-कर्म, ज्ञान-ध्यान बाणी तथा योग-साधनाओं के होते हुए भी, 'ईश्वरीय तत-रूप 'आत्मिक धर्म' 'नाम' से **वंचित जा रहा है ।**

8. अन्य योनियाँ : आदि से साथ लिखे हुकुम अनुसार जीवन भोगती हैं तथा इन्हें अपनी 'जीवन-दिशा' या 'धर्म' को **बदलने की आवश्यकता नहीं पड़ती ।**

इन्सान : वातावरण तथा संगति अनुसार, अपने-अपने निश्चय तथा धर्म घड़े हुए हैं जो मानसिक रुचि तथा स्वार्थ अनुसार **बदलते रहते हैं ।**

9. अन्य योनियाँ : जीते हुए इन्सान की सेवा करती हैं तथा मर कर भी प्रकृति के काम आती हैं ।

पसू मरै दस काज सवारै ।। (पृ ८७०)

इन्सान : नरू मरै नरु कामि न आवै ।। (पृ ८७०)

10. अन्य योनियाँ : भाणे में विचरण करती हुई, 'जीवन' की अनेक सीढ़ीयाँ **ऊपर की ओर** चढ़ जाती हैं ।

इन्सान : सीढ़ी के शिखर पर पहुँच कर, तुच्छ कर्मो द्वारा **नीचे उतरने का** 'भागीदार' बनता है ।

साधारण जनता को तो यह भी पता नहीं कि —

1. जीवन क्या है ?
2. वे अब कैसा जीवन व्यतीत कर रहे हैं ?
3. उनकी जीवन प्रणाली में क्या त्रुटि है ?
4. इससे ऊँचा तथा बेहतर और भी कोई जीवन है ?
5. ऐसे उत्तम तथा उत्कृष्ट जीवन की क्या **'जीवन दिशा'** है ।
6. श्रेष्ठ जीवन के क्या **साधन** हैं ?

साधारण जनता अपने पूर्व संस्कारों अनुसार तथा अब के वातावरण में इतनी तल्लीन तथा मदहोश हो गयी है, कि उसे किसी उत्तम जीवन को **देख कर भी**, अपने जीवन को ऊँचा तथा बेहतर बनाने का कोई उत्साह, उमाह, साहस या उद्यम नहीं पैदा होता । वे अपनी साँस्कारिक तुच्छ रुचियों अनुसार अपने **पुराने 'जीवन वेग'** में ही लापरवाह तथा बेपरवाह होकर बहते जा रहे हैं तथा उसी प्रकार रोष,

शिकायतें, 'ईर्ष्या-द्वेष', वैर-विरोध, लड़ाई-झगड़ों में परेशान होकर अपना अमूल्य जीवन व्यर्थ खो कर दुखी हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त, अनेक प्रकार के **'नशों'** की आदत डालकर अपना शारीरिक तथा आर्थिक जीवन भी तबाह कर रहे हैं।

आजकल तो हमारा जीवन इतना मलिन हो गया है कि हमने अपने आस-पास का वातावरण तथा वायुमंडल अत्यन्त दूषित कर दिया है, जिसमें स्वार्थ, नफरत, वैर-विरोध, ईर्ष्या-द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार का बोल बाला तथा व्यवहार है तथा मायिकी ग्लानि की 'दुर्गन्ध' से भगदड़ मची हुई है। ऐसी ग्लानिपूर्ण दशा में गुरुओं, महापुरुषों तथा गुरबाणी के उच्च-पवित्र **आत्मिक उपदेश** खूंटे पर टांग दिये हैं तथा 'धर्म' एक तरह का बाहरी दिखलावा तथा पाखण्ड ही बन गया है। आश्चर्य की बात तो यह है कि हम पढ़े-लिखे, ज्ञानी-ध्यानी भी इस ग्लानि की मार से नहीं बच सके।

जब हमारे दिखावटी धार्मिक मार्गदर्शक ही इस दीर्घ मायिकी ग्लानि की जबरदस्त लपेट में आ गये हैं, तब जनता को कौन सुधारे ?

इस मायिकी ग्लानि के विषय में गुरबाणी हमें यूँ ताड़ना करती है —

हरि नामु न भाइआ बिरथा जनमु गवाइआ
नानक जमु मारि करे खुआर ॥ (पृ ८५२)

मनमुख दुखीए सदा भ्रमि भुले तिन्ही बिरथा जनमु गवाइआ ॥(पृ ८५२)

कहै नानकु जिन सचु तजिआ कूड़े लागे तिनी जनमु जूऐ हारिआ ॥
(पृ ९१९)

लख चउरासीह भ्रमते भ्रमते दुलभ जनमु अब पाइओ ॥
रे मूड़े तू होछै रसि लपटाइआ ॥
अंम्रितु संगि बसतु है तेरै बिरिविआ सिउ उरझाइओ ॥ (पृ १०१७)

धंधै धावतु जनमु गवाइआ बिनु नावै दुखु पाइआ ॥ (पृ १०६७)

मनमुख भूले काहे आए ॥
नामहु भूलै जनमु गवाए ॥ (पृ ११७४)

तिलु तिलु पलु पलु अउध फुनि घाटै बूझि न सकै गवारु ॥
सो किछु करै जि साथि न चालै इहु साकत का आचारु ॥ (पृ १२००)

बिरवई दिनु रैनि इव ही गुदारै ।।
गोबिंदु न भजै अहंबुधि माता जनमु जूऐ जिउ हारै ।। (पृ १२०५)
त्रै गुण सरब जंजालु है नामि न धरे पिआरु ।।
गुण छोडि अउगण कमावदे दरगह होहि खुआरु ।।
जूऐ जनमु तिनी हारिआ कितु आए संसारि ।। (पृ १२८४)

सतिगुरू न सेविओ सबदु न रखिओ उर धारि ।।
धिगु तिना का जीविआ कितु आए संसारि ।। (पृ. १४१४)

मनु माइआ मै फधि रहिओ बिसरिओ गोबिंद नामु ।।
कहु नानक बिनु हरि भजन जीवन कउने काम ।। (पृ १४२८)

इस **'मायिकी ग्लानि'** से **बचने के लिए** गुरबाणी हमें यूँ उपदेश देती है —

जब लगु जोति काइआ महि बरतै आपा पसू न बूझै ।।
लालच करै जीवन पद कारन लोचन कछू न सूझै ।।२।।
कहत कबीर सुनहु रे प्रानी छोडहु मन के भरमा ।।
केवल नामु जपहु रे प्रानी परहु एक की सरनां ।।३।। (पृ ६९२)

मानस जनमु दीओ जिह ठाकुरि सो तै किउ बिसराइओ ।।
मुकतु होत नर जा कै सिमरै निमख न ता कउ गाइओ ।।(पृ. ९०२)

कहतु कबीरु रामु की न सिमरहु जनमु अकारथु जाइ ।।(पृ. ११२४)

कहा नर अपनो जनमु गवावै ।।
माइआ मदि बिरिवआ रसि रचिओ राम सरनि नही आवै ।। (पृ १२३१)

कहत कबीरु राम भजु बउरे जनमु अकारथ जात ।। (पृ १२५२)

प्राणी गुरमुखि नामु धिआइ ।।
जनमु पदारथु दुबिधा खोइआ कउडी बदलै जाइ ।। (पृ १२६१)

असथिरु जो मानिओ देह सो तउ तेरउ होइ है खेह ।।
किउ न हरि को नामु लेहि मूरख निलाज रे ।। (पृ १३५३)

समुंद्र में से **'पानी'** उड़ कर भाप, बादल, बर्फ, ओले, वर्षा, नाले, नदिया, नहर, पोखर, तालाब आदि **अनेक 'रूप' धारण करता हुआ** अपने स्त्रोत 'समुन्द्र' में

पुनः आ कर समा जाता है। पानी के अनेक 'रूप' उसकी **संगति** अनुसार बदलते रहते हैं, जैसे कि —

गर्मी की संगति करके '**भाप**'
ठंड की संगति करके '**बादल**'
पुनः गर्मी के प्रभाव में '**वर्षा**'
वर्षा से धरती की दशा अनुसार पोखर,
तालाब, नाले, नदियां, नहर के स्वरूप बनते हैं।

परन्तु जरूरी नुक्ता यह है कि यद्यपि '**पानी**' **ने 'संगति' अनुसार कई रूप धारण किये,** परन्तु उसकी अन्तर-आत्मा में **एक ही जीवन-रौं चलती रही,** जो अनेक शक्लों, रूप-रंगों, नामों द्वारा प्रवृत्त तथा प्रकट होती रही तथा उसका अपने मूल-स्त्रोत्र को मिलने का '**आकर्षण**' लगातार बना रहा।

इसी प्रकार पानी में जो वस्तु डालते हैं, वह उसकी रंगत, दुर्गन्ध तथा स्वाद का प्रभाव लेता है तथा भाँति-भाँति का मिश्रण (solution) बनता जाता है। यद्यपि यह '**मिश्रण**' हर वस्तु की मिलावट से बदलता रहता है, जिस प्रकार लस्सी, चाय, शिकंजवी, शराब, दवाईयाँ आदि अनेक शक्लों, रंगों, रूपों, नामों अधीन प्रवृत्त होता है — परन्तु इन अनेक '**जीवन – रूपों**' में 'पानी' का अस्तित्व होता है। दूसरे शब्दों में पानी का अस्तित्व तो वही है परन्तु उसके अनेक 'स्वरूप'— मिलावट अथवा 'संगति' अनुसार बदलते रहते हैं।

ठीक इसी प्रकार 'जीव' का 'अस्तित्व' या 'जीवन रौं' अथवा 'ज्योति' तो एक ही सर्वत्र परिपूर्ण है, परन्तु जीव के मन के '**जीवन स्वरूप**' उसकी 'संगति' अनुसार बदलते रहते हैं।

दूसरे शब्दों में आन्तरिक पुराने अन्तःकरण तथा बाहरी वातावरण या संगति की रंगत अनुसार प्रभाव लेकर, हमारा 'जीवन' बनता तथा बदलता रहता है।

जो जैसी संगति मिलै सो तैसो फलु खाइ ।। (पृ. १३६९)

जब यह 'संगति' की 'रंगत' हमारे मन पर '**दृढ़**' हो जाये अथवा पक्का रंग चढ़ जाये, तब वह रंगत ही हमारा '**जीवन-रूप**' बन जाती है।

यह 'रंगत' जीवन में धँस-बस-समा कर अथवा दृढ़ होकर हमारा —

जीवन-आधार
मार्ग-दर्शन

प्रेरणा

'जीवन-रूप'

'जीवन पद'

जीवन

ही बन जाती है।

उदाहरण के रूप में 'अफीमची' का नशा ही उस का 'जीवन – आधार' बन जाता है तथा अंत में वह 'नशा' ही उसका **'जीवन-रूप'** बन जाता है। उसके बोल, हरकत, सोच अथवा जीवन के प्रत्येक पक्ष द्वारा सहज-स्वभाव अनजाने ही, उससे 'अफीम' की 'रंगत' का प्रकाश तथा प्रकटाव होता है।

यह उदाहरण शारीरिक रुचि के प्रभाव का वर्णन है। इसी प्रकार मानसिक तथा आत्मिक 'रंगत' या 'नशे' का भी अति सूक्ष्म, गुप्त तथा गहरा प्रभाव जीव के जीवन पर पड़ता है।

मानसिक रव्यालों की 'रंगत' के प्रभाव के विषय में विस्तारपूर्वक पहले बताया जा चुका है कि हमारा मन आस-पास के वातावरण तथा 'संगति' का प्रभाव लेता है, तथा अपने रव्यालों अनुसार कर्मों का अभ्यास करते हुए अपने **मन के रव्यालों का 'घोल' बदलता रहता है** तथा अपनी रंगत को दृढ करता हुआ अपने अन्तःकरण में उतार लेता है। जीव अपने 'नित्य' के रव्यालों, सोच तथा कर्मों द्वारा 'कर्म-बद्ध' हो कर, कर्म करता तथा परिणाम भोगता है।

इस प्रकार जीव की **मायिकी रंगत ही,** उसका जीवन-आधार अथवा **'जीवन-रूप'** बन जाती है।

हमारे 'दैनिक जीवन' का

'बहाव' (routine)

उलटा चक्र

रव्यालों का वेग

आदतें

स्वभाव

आचरण

इतना शक्तिमान हो चुका है कि हम —

जानते हुए

महसूस करते हुए

समझते हुए

इच्छा करते हुए

उद्यम करते हुए

भी पुरानी मायिकी प्रणाली में से अपने आप निकल नहीं सकते तथा बार-बार फँसते व परेशान होते रहते हैं ।

अपितु मायिकी 'उलटे चक्र' या 'तुच्छ रव्यालों' के वेग इतने तेज़ तथा तीक्ष्ण हो जाते हैं कि हमें इससे बाहर की ओर देखने, सोचने तथा निकलने की फुर्सत ही नहीं मिलती ।

इहु जगतु ममता मुआ जीवण की बिधि नाहि ।। (पृ ५०८)

मदि माइआ कै भइओ बावरो हरि जसु नहि उचरै ।।
करि परपंचु जगत कउ डहकै अपनो उदरु भरै ।।१।।
सुआन पूछ जिउ होइ न सूधो कहिओ न कान धरै ।। (पृ ५३६)

हमारी इस 'विवशता' या मजबूरी का प्रमाण यह है कि बावजूद अनेक —

धर्मों
धर्म स्थानों
धार्मिक ग्रन्थों
ज्ञान
फिलोस्फियों
पाठ-पूजा
कर्म-कांडों
योग-साधनाओं

के इन्सान का मानसिक तथा आत्मिक 'जीवन' ऊँचा तथा बेहतर होने की जगह गिरता जा रहा है ।

इसी लिए गुरबाणी ने जीव को मायिकी ग्लानि वाले —

उलटे चक्र
तुच्छ रव्यालों के वेग
आदतों
स्वभाव

में से निकालने का एकमात्र साधन '**साध संगति**' अथवा '**सतसंगति**' ही बताया है ।

'**साध संगति**' के इलावा इन्सान के लिए, मायिकी ग्लानि से बचने तथा निकलने का कोई अन्य साधन नहीं है —

साधसंगति बिनु तरिओ न कोइ ।। (पृ३७३)

बिनु संगती सभि ऐसे रहहि जैसे पसु ढोर ।। (पृ. ४२७)

साधसंगति गुर सबद विणु लख चउरासीह जूनि भवावै । (वा.भा.गु ५/१८)

यहाँ निर्णय करने वाला नुक्ता यह है, कि गुरबाणी में **'साध संगति'** की प्रेरणा की गयी है । इस का अर्थ यह है कि बरख्शे हुए गुरमुख प्यारे, संत, साधु अथवा **'आत्म-जीवन' वाले** महापुरुषों की संगति तथा सेवा ही लाभदायक तथा कल्याणकारी हो सकती है ।

इसी कारण गुरबाणी में **'साध संगति'** की यूँ महिमा की गई है तथा ताकीद पूर्ण हुकुम किया है —

मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ।। (पृ. १२)

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ।।
मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक जनम जनम की सोई जागी ।।
(पृ२०४)

साधसंगि होइ निरमला नानक प्रभ कै रंगि ।। (पृ. २९७)

साधसंगि मिलि हरि गुण गाए इहु जनमु पदारथु जीता रे ।। (पृ. ४०४)

करि साधसंगति सिमरु माधो होहि पतित पुनीन ।। (पृ. ६३१)

सफल जनमु तिस का जग भीतरि साधसंगि नाउ जापे ।। (पृ ७५०)

सफल जनमु होवत वडभागी ।।
साधसंगि रामहि लिव लागी ।। (पृ ८०५)

चीति आइओ मनि पुरखु बिधाता संतन की सरणाई ।। (पृ १०००)

साधसंगति निहचउ है तरणा ।। (पृ. १०७१)

गुरमुखि दुरलभ देह अउसरु जाणदे ।
साधसंगति असनेह सभ रंग माणदे । (वा.भा.गु१९/११)

वास्तव में समस्त सृष्टि में एक ही **'आत्म जीवन रौं'** चल रही है ।

सभु इको सबदु वरतदा जो करे सु होई ।। (पृ. ६५४)

सबदु दीपकु वरतै तिहु लोइ ।। (पृ. ६६४)

सरब जोति तेरी पसरि रही ।।
जह जह देखा तह नरहरी ।। (पृ ८७६)

'फूल की' —

महक

संगत

सौन्दर्य

कोमलता

मिठास

यौवन, तथा

मुरझाने

तक एक मात्र 'जीवन-रौं' ही चल रही है ।

यह 'जीवन-रौं' समस्त सृष्टि में —

सदैव

निरन्तर

एक-सार

सहज

मूक

गुप्त

चुपचाप चल रही है तथा यही 'जीवन-रौं' समस्त जीवों को —

'जीवन दान'

'जीवन पदवी'

'जीवन रूप'

'जीवन'

प्रदान करती रहती है । इस '**जीवन-दान**' तथा **जीवन-पद** को गुरबाणी में यूँ दर्शाया गया है —

कहि कबीर जीवन पद कारनि हरि की भगति करीजै ।।
एकु आधारु नामु नाराइन रसना रामु रवीजै ।। (पृ ३३८)

जीअ दानु गुरि पूरै दीआ राम नामि चितु लाए ।। (पृ. ४४३)

दमि दमि सदा सम्हालदा दंमु न बिरथा जाइ ।।
जनम मरन का भउ गइआ जीवन पदवी पाइ ।। (पृ. ५५६)

जीवन रूपु सिमरणु प्रभ तेरा ।। (पृ. ७४३)

जीवन पदवी हरि का नाउ ।।
मनु तनु निरमलु साचु सुआउ ।। (पृ. ७४४)

अब मोहि जीवन पदवी पाई ।।
चीति आइओ मनि पुरखु बिधाता संतन की सरणाई ।। (पृ १०००)

नामु न बिसरै तब जीवनु पाईऐ
बिनती नानक इह सारै ।। (पृ १२१४)

उपरोक्त विचारों से स्पष्ट होता है कि '**मायिकी जीवन**' को '**दैवीय जीवन**' में बदलने के लिए गुरबाणी में **'साध संगति' तथा 'सिमरन' के साधन ही बताये गये हैं ।**

'साध संगति' के विषय में तो पहले विस्तार पूर्वक बताया जा चुका है ।

'सिमरन' का अर्थ है 'स्मृति' अथवा 'याद' में लाना, याद करना तथा बार-बार याद करना ।

पहले रसना द्वारा '**नाम**' अथवा '**गुरमंत्र**' जपते हैं । फिर धीरे-धीरे साध – संगति की सहायता तथा अभ्यास से मन सिमरन में टिकने लग जाता है तथा अकथनीय शान्ति, सुख, प्यार, रस आदि प्रतीत होने लगता है ।

उपजी प्रीति प्रेम रसु चाउ ।। (पृ २९०)

फिर '**गुरमंत्र**' प्यारा तथा रसदायक लगता है तथा धीरे-धीरे हमारे तन,मन, अन्तःकरण, रोम-रोम में, 'गुरमंत्र' गहरा धँस-बस-समा कर **दृढ़ हो जाता है** तथा जीव **गुरमंत्र का 'रूप' ही बन जाता है ।**

कबीर तूं तूं करता तू हूआ मुझ महि रहा न हूं । (पृ. १३७५)

इस उच्चत्तम, पवित्रत्तम **आत्मिक अवस्था** अथवा दृढ़ हुए सिमरन की **'सहज समाधि'** में इतना महा रस तथा चाव होता है कि जीव इस 'प्रिम रस' को छोड़ ही नहीं सकता ।

तेरा जनु राम रसाइणि माता ।।
प्रेम रसा निधि जा कउ उपजी छोडि न कतहू जाता ।। (पृ ५३२)

मू लालन सिउ प्रीति बनी ।। रहाउ।।
तोरी न तूटै छोरी न छूटै ऐसी माधो खिंच तनी ।। (पृ ८२७)

बिसरत नाहि मन ते हरी ।।
अब इह प्रीति महा प्रबल भई आन बिखै जरी ।। (पृ ११२०)

ऐसी विस्माद मयी, प्रेममयी अवस्था में 'जीव' अन्तर-आत्मा में —

जीवन-रौं
शब्द
नाम
अनहद धुन
प्रीत
प्रेम
रस
चाव
खुशी

महसूस करता हुआ, 'सहज-समाधि' में लिवलीन हो जाता है ।

अकाल पुरुष एक है, तथा उसकी —

ज्योति
हुकुम
शब्द
नाम
धुन
प्रकाश

की रवानगी भी एक ही है ।

यह एक ही 'जीवन-रौं' 'जीवन-डोर', 'प्रिम खेल' , 'जीवन' समस्त सृष्टि के कण-कण के भीतर सदैव, अटूट, त्रुटिरहित तथा गुप्त चल रही है।

इस जीवन-रौं की सहज चाल की —

एक ही धड़कन है

एक ही अकल-कला है

एकसार प्रवाह है

एक ही 'जीवन' है

जिसे '**जीवन पदवी**' तथा '**जीवन रूप**' कहा गया है ।

जब गुरमुख जन इस विस्मादमय अवस्था का आनंद लेता है, तब उस का **सिमरन 'जीवन-रूप' बन जाता है** तथा वह गुरबाणी की पंक्ति —

जीवन रूपु सिमरणु प्रभ तेरा ।। (पृ ७४३)

को अपने जीवन में **'कमा' कर 'आनंद' ले रहा होता है ।**

जब कभी जीव का ध्यान इस 'जीवन-रूप' सिमरन में से निकलता है तब उसकी **'आखा जीवा विसरै मरि जाउ'** वाली दशा हो जाती है ।

बोतल में पड़ी 'शराब' का अस्तित्व केवल रंग-बिरंगे, कड़वे मिश्रण (solution) का होता है, जिसकी जानकारी या ज्ञान भी 'फोकट' ही होता है । उसी शराब के 'पैग' पीने से 'शराबी' कोई अनोखे शारीरिक तथा मानसिक तजुरबे अनुभव करता तथा आनन्द लेता है ।

सरूर, मस्ती, खुशी, उमाह, जोश, चाव आदि 'शराबी' के तन मन में से फूट-फूट कर खुद ब खुद प्रकट होते हैं ।

दूसरे शब्दों में **'शराब' का 'पैग'**—'शराबी' के **अन्दर जा कर**, शक्तिमान तथा "**जीवन-रूप**' बन जाता है व उस के **'सरूर'** के प्रभाव अधीन, 'शराबी' की प्रत्येक —

हरकत

अदा

बोल

दृष्टि

व्यवहार

सभी कुछ बदल जाता है।

इस प्रकार कुछ समय उपरान्त 'शराबी' का **आत्मन भी 'शराब रूप'** बन जाता है तथा वह 'शराबी' कहलाता है।

इस प्रकार —

'शराब' ही उसका '**जीवन**'
'सरूर' उसका '**जीवन रूप**'
'शराब' तथा 'शराबी' **एक रूप**

बन जाते हैं।

यदि समय पर 'शराब' न मिले, तब शराबी को 'बेहद व्याकुलता होती है' तथा उसका मरण हो जाता है।

हरि बिनु रहि न सकउ इक राती ॥
जिउ बिनु अमलै अमली मरि जाई है
तिउ हरि बिनु हम मरि जाती ॥ (पृ ६६८)

ठीक इसी प्रकार गुरमुख जन, सिमरन करते हुए, ईश्वरीय 'जीवन-रौं', 'शबद', 'नाम' की रुनझुन तथा बिस्मादमयी महा रस को —

बूझते
चीन्हते
पहचानते
अनुभव करते

हुए, स्वयं ही '**शबद रूप**' हो जाते हैं तथा इस प्रकार **प्रभु का 'सिमरन' उनका 'जीवन रूप' ही बन जाता है** तथा वे गुरु वाक् —

जीवन रूपु सिमरणु प्रभ तेरा ॥ (पृ ७४३)

की अपने **जीवन द्वारा 'व्याख्या' करते हैं** तथा वे गुरमति अनुसार **आत्मिक 'जीवन पदवी' को प्राप्त होते हैं।**

❄❄❄ **(समाप्त.....)**